रामायणकालीन समाज और संस्कृति → किसी भी राष्ट्र का साहित्य वहाँ के समाज और संस्कृति का सच्चा ~~प्रतिबिम्ब~~ प्रतिबिम्ब होता है। उसके माध्यम से हम तात्कालीन सामाजिक मान्यताओं और संस्कृति की धारा के विषय में विस्तार से जान पाते हैं। काव्य प्रणयन के क्रम में आदिकवि वाल्मीकि ने उस समय की मान्यताओं के विषय में विस्तृत चर्चा की है तथा ऐसे सिद्धान्तों की स्थापना की है जो सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक हो गये हैं।

आदिकाव्य रामायण में चित्रित संस्कृति भारतीय जीवन के विविध पहलुओं - राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक पर प्रकाश डालती है।

रामायणकालीन राजा निरंकुश नहीं ~~था~~ था। वह सदैव प्रजाराधन में लगा रहता था।

Dr. Dhanamjay Vasudeo Dwivedi

Scanned with CamScanner

~~सज्जा~~ राज्य में होने वाली मृत्यु के लिए राजा को दोषी माना जाता था। ऐसी मान्यता थी कि विधिवत शासन न करने से राजा की प्रजा विपत्ति में पड़ती है -

"राजदोषैर्विपद्यन्ते प्रजा ~~ह~~ हयविधिपालिता।
असद्वृत्ते हि नृपतौ अकाले म्रियते जनः॥"

सामान्यतया राज्याधिकार वंशानुगत होता था। ~~सज्जा~~ राजा की मृत्यु के पश्चात् उसका ज्येष्ठ पुत्र स्वतः राज्याधिकारी बन जाता था (2/11/36)।

शासन का नियन्त्रण मंत्रिपरिषद् ~~द्वारा~~ के हाथों में था। राम ने भरत को यह कहा है कि मंत्रियों के परामर्श से नीति-निर्धारण करना (2/100/71)।

"मन्त्रिभिस्त्वं यथोद्दिष्टं चतुर्भिस्त्रिभिरेव वा।
कथ्यित समस्तैर्व्यस्तैश्च मन्त्रं मन्त्रयसे बुधः॥"

इक्ष्वाकु वंश के नृपति धर्म-परायण, प्रजापालक, पराक्रमी तथा विद्या-विनय सम्पन्न हुआ करते थे। महाराज दशरथ की गुणावली एक आदर्श राजा के सर्वथा अनुरूप है -

"तस्यां पुर्यामयोध्यायां वेदवित् सर्वसंग्रहः।
दीर्घदर्शी महातेजाः पौरजानपदप्रियः॥
इक्ष्वाकूणामतिरथो यज्वा धर्मपरो वशी।
महर्षिकल्पो राजर्षिस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः॥
बलवान् निहतामित्रो मित्रवान् विजितेन्द्रियः।
धनैश्च संचयैश्चान्यैः शक्रवैश्रवणोपमः॥
यथा मनुर्महातेजा लोकस्य परिरक्षिता।
तथा दशरथो राजा लोकस्य परिरक्षिता॥
तेन सत्याभिसंधेन त्रिवर्गमनुतिष्ठता।
पालिता सा पुरी श्रेष्ठा इन्द्रेणेवामरावती॥"
(1/6/1-5)

Scanned with CamScanner

राजा के मन्त्रिमण्डल में राजनीति-विशारद, शास्त्रज्ञ एवं निःस्वार्थी आठ मुनिगण हुआ करते थे। प्रशासन संचालन के लिए राजा के अधीन अनेक उच्चाधिकारी होते ही थे। रामायण में इनकी संख्या 18 बताई गई है। ये हैं-

(i) मंत्री (ii) पुरोहित (iii) युवराज (iv) सेनापति, (v) द्वारपाल (vi) अन्तःपुराध्यक्ष (vii) कारागाराध्यक्ष, (viii) धनाध्यक्ष (ix) राजदूत (x) न्यायाधिकारी (xi) नगराध्यक्ष (xii) कर निर्धारक (xiii) धर्माध्यक्ष, (xiv) सभाध्यक्ष (xv) नगररक्षक (xvi) दुर्गपाल (xvii) राष्ट्रान्तपालक तथा (xviii) अटवीपालक।

शासन व्यवस्था के लिए ये 18 पदाधिकारी इतने महत्त्वपूर्ण थे कि इन्हें तीर्थ की ~~संज्ञा~~ संज्ञा दी गई है-

"कच्चिदष्टादशान्येषु स्वपक्षे दश पञ्च च।
त्रिभिस्त्रिभिरविज्ञातैर्वेत्सि तीर्थानि चारकैः॥"
(2/100/36)

रामायण में सैनिक संगठन और शासन-सम्बन्धी प्रचुर सामग्री प्राप्त होती है। रथ, हाथी, घोड़े और पैदलों की चतुरङ्गिणी सेना होती थी, जो धन-धान्य, जल, अस्त्र-शस्त्र, यन्त्र और शिल्पकारों से सुसज्जित किलों में तैनात रहती थी। उस समय एक विशेष युद्ध सचिव होता था, जिसका कार्य अपने और शत्रु के बलाबल का ज्ञान रखना तथा तदनुसार राजा को सम्मति प्रदान करना था।

उस युग में दिव्य अस्त्रों का प्रचलन था। दंडचक्र, धर्मचक्र, विष्णुचक्र, ऐन्द्र अस्त्र, वज्र, त्रिशूल, ब्रह्मास्त्र, कालपाश, वरुणपाश, नारायणास्त्र, आग्नेयास्त्र आदि इसी श्रेणी के अस्त्र हैं। देव, विद्याधर, गन्धर्व, पिशाच आदि सबके विशिष्ट अस्त्रों की प्राप्ति विश्वामित्र के द्वारा

Scanned with CamScanner

राम को कराई गयी है (द्रष्टव्य बालकाण्ड / सर्ग 27)।

इस काल में सन्ध्या के आते ही युद्ध बन्द कर दिया जाता था। इस नियम का पालन राक्षस भी करते थे। सत्यवादी दूत या गुप्तचर शत्रु की सेना में जाने पर भी या अनुचित कार्य या बात कहने पर भी अवध्य थे –

"न दूतान् घ्नन्ति काकुत्स्थ वार्यन्तां साधु वानराः।"
(6/20/18)

"वधं न कुर्वन्ति परावरज्ञा दूतस्य सन्तो वसुधाधिपेन्द्राः॥"
(5/52/5)

रामायण के अनुसार राजा की नितान्त आवश्यकता होती है –

"नाराजके जनपदे धनवन्तः सुरक्षिताः।
शेरते विवृतद्वारा कृषिगोरक्षजीविनः॥"
(2/67/19)

वस्तुतः इस आदिकाव्य के अनुसार राजा ही धर्म और पाप का मूल है –

"राजा धर्मश्च कामश्च द्रव्याणां चोत्तमोनिधिः।
धर्मः शुभं वा पापं वा राजमूलं प्रवर्तते॥"

रामायणकालीन समाज में वर्णाश्रम धर्म पूर्णरूप से प्रतिष्ठित था। चारों वर्ण – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र - स्वकर्म निरत थे -

"क्षत्रं ब्रह्ममुखं चासीद् वैश्याः क्षत्रमनुव्रताः।
शूद्राः स्वकर्मनिरतास्त्रीन् वर्णानुपचारिणः॥"
(1/6/19)

रामायण में चतुर्वर्ण की उत्पत्ति परमपुरुष से बताई गई है –

Dr. Dhanamjay Vasudeo Dwivedi

Scanned with CamScanner

"मुखतो ब्राह्मणा जाता उरसः क्षत्रियास्तथा।
ऊरुभ्यां जज्ञिरे वैश्याः पद्भ्यां शूद्रा इति श्रुतिः।"
(3/14/30)

ब्राह्मणों के लिए वेदाध्ययन और तपश्चर्या अत्यन्त आवश्यक थी। क्षत्रियों का प्रमुख कार्य चतुर्वर्णों का संरक्षण था-

"एष हि प्रथमो धर्मः क्षत्रियस्यानिषेचनम्।
येन शक्यं महाप्राज्ञ प्रजानां परिपालनम्॥
कश्च प्रत्यक्षमुत्सृज्य संशयस्थमलक्षणम्।
आयतिस्थं चरेद् धर्मं क्षत्रबन्धुरनिश्चितम्॥
अथ क्लेशजमेव त्वं धर्मं चरितुमिच्छसि।
धर्मेण चतुरो वर्णान् पालयन् क्लेशमाप्नुहि॥"
2/106/19-21

समाज को आर्थिक रूप से व्यवस्थित करने के लिए वैश्यों के कर्त्तव्य निर्धारित थे। धनार्जन के निमित्त वह गोरक्षा और वाणिज्य का काम करता था। शूद्रों का मूल धर्म सेवा था।

रामायण में आश्रमों की संख्या चार निर्धारित की गई है। ब्रह्मचर्य आश्रम में व्यतीत होने वाला काल शिक्षा-दीक्षा, ब्रह्मचर्य और अनुशासन का काल था। विद्या अध्ययन करता हुआ ब्रह्मचारी गुरु के प्रति असीम श्रद्धा और भक्ति रखता था। गृहस्थाश्रम के अन्तर्गत वैवाहिक जीवन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसे चारों आश्रमों में सर्वप्रमुख माना गया है-

"चतुर्णामाश्रमाणां हि गार्हस्थं श्रेष्ठमुत्तमम्।
आहुर्धर्मज्ञ धर्मज्ञास्तं कथं त्यक्तुमिच्छसि॥"
(2/106/22)

अपनी आयु के तृतीय-चरण में मनुष्य वानप्रस्थ आश्रम में प्रविष्ट होता था। साधारणतया मनुष्य अपने गृहस्थ-जीवन के सम्पूर्ण उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने के पश्चात् ही इस आश्रम को ग्रहण करता था। प्रथम तीन आश्रमों के समस्त उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने के पश्चात् मनुष्य संन्यास आश्रम में सम्पूर्णतः संसार से विरक्त हो जाता था।

Scanned with CamScanner

यद्यपि रामायणकालीन समाज में पुत्री की अपेक्षा पुत्र की कामना अधिक की जाती थी तथापि पुत्रियों में भी उनका अनुराग यथेष्ट था। रामायण के अनुशीलन से स्पष्ट होता है कि स्त्री शिक्षा का विरोध नहीं था। इस महाकाव्य में कौशल्या और तारा को 'मन्त्रविद्' कहा गया है (2/20/15, 4/16/12)। सीता नित्य वैदिक प्रार्थनाएं किया करती थीं। वे संध्याकालिक उपासनाएं करती थीं—

" सन्ध्याकालमनाः श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी।
नदीं चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी॥"
5/14/49

रामायण में शिक्षा के विविध प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है। इस आदिकाव्य में शिक्षा के जिन विषयों का उल्लेख प्राप्त होता है उससे प्रकट होता है कि शिक्षा का क्षेत्र कितना व्यापक होता था। ये विषय हैं— दर्शन, धर्मशास्त्र, राजनीति, इतिहास, अथर्ववेद, यजुर्वेद, अर्थशास्त्र आदि। (द्रष्टव्य अयोध्याकाण्ड/सर्ग 100)।

निष्कर्षरूप में आचार्य कपिलदेव द्विवेदी के मन्तव्य का उल्लेख करना समीचीन होगा~

"रामायण आर्यों का आचार शास्त्र एवं धर्मशास्त्र है। यह मानवजीवन का सर्वाङ्गीण आदर्श प्रस्तुत करता है। यह धार्मिक दृष्टि से प्राचीन संस्कृति, आचार, सत्य, धर्म, व्रत पालन, विविध यज्ञों का महत्त्व आदि का पूरा इतिहास प्रस्तुत करता है। सामाजिक दृष्टि से यह पति-पत्नी के सम्बन्ध, पिता-पुत्र के कर्त्तव्य, गुरु-शिष्य का पारस्परिक व्यवहार, भाई का भाई के प्रति कर्त्तव्य, व्यक्ति का समाज के प्रति उत्तरदायित्व, आदर्श पिता-माता-पुत्र-भाई-पति एवं पत्नी का चित्रण, आदर्श गृहस्थ जीवन की अभिव्यक्ति करता है। इसमें पितृभक्ति, पुत्र-प्रेम, भ्रातृस्नेह एवं जन साधारण से सौहार्द का सुन्दर चित्रण है। सांस्कृतिक

Scanned with CamScanner

दृष्टि से यह राम राज्य का आदर्श, पाप पर पुण्य की विजय, लोभ पर त्याग का प्राबल्य, अत्याचार और अनाचार पर सदाचार की विजय, वानरों में आर्यसंस्कृति का प्रसार, यज्ञादि का महत्त्व, जीवन में नैतिकता, सत्य प्रतिज्ञता और कर्त्तव्य के लिए बलिदान का आदर्श प्रस्तुत करता है। राजनीतिक दृष्टि से यह राजा के कर्त्तव्य और अधिकार, राजा-प्रजा सम्बन्ध, उच्च नागरिकता, उत्तराधिकार विधान, शत्रु संहार, पाप-विनाशन, सैन्य संचालन आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालता है। रामायण भारतीय सभ्यता, नगर-ग्रामादि-निर्माण, सेतुबन्ध, वर्णाश्रम व्यवस्था आदि सांस्कृतिक और सामाजिक विषयों पर प्रकाश डालने वाला प्रकाश स्तम्भ है, जिसके प्रकाश में प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का साक्षात् दर्शन होता है।"

Dr. Dhanamjay Vasudeo Dwivedi

Scanned with CamScanner